लोकोत्तर अनुभूतियों की कवयित्री : महादेवी वर्मा

डॉ. हरीश अरोड़ा,

हिन्दी विभाग
पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य)
(दिल्ली विश्वविद्यालय)
नेहरू नगर, नई दिल्ली–110 065

इस सम्पूर्ण सृष्टि ने प्रकृति के अद्‌भुत सौन्दर्यमयी प्रतिमानों से ही स्वयं को रचा और विस्तार पाया। उस सृष्टि में पल प्रतिपल बदलते माधुर्य और सौन्दर्य ने संवेदनशील मानव को कल्पनाजगत के एक नवीन लोक में ले जाकर उस असीम की तलाश में लगा दिया जिसने सृष्टि के इस सुन्दरतम् रूप को जन्म दिया होगा। सृष्टि के इस रहस्य की खोज में संवेदना से परिपूरित मानव ने अपनी अनुभूतियों में उस निराकार, अपरिमेय से अपना तादात्म्य स्थापित करने का प्रयास किया। जैसे–जैसे वह उस निराकार से अपने आत्म–तत्त्व के माध्यम से तादात्म्य की स्थिति में आता गया उसकी चेतना ने किसी अलौकिक व्यक्तित्व को अपने भीतर अनुभूत किया। उसके उपरान्त मन, बुद्धि, चेतना सभी उस रहस्यमयी व्यक्तित्व की गुत्थियों को सुलझाने में लग गए।

हिन्दी कविता में जब–जब समाज और व्यक्ति के जीवन नें वेदना का साक्षात्कार किया तब–तब कवियों ने रहस्यमयी अलौकिक व्यक्तित्व को अपनी वेदना के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयास किया। लेकिन हिन्दी कविता में केवल तीन कवियों की अनुभूतियाँ ही उस असीम, निराकार, अलौकिक रहस्य के साथ अपना रागात्मक सम्बन्ध स्थापित कर पाए और उनकी कविताओं में एक ऐसी दिव्य अनुभूति का साक्षात्कार होता है जो उस उस असीम और अपार्थिव महा अस्तित्व के साथ एकात्मकता का अनुभव कराता है। वे हैं कबीर, जायसी और महादेवी वर्मा।

छायावादी कविता के वसन्तोत्सव में अपने माधुर्य और सुकोमल भावों के फष्पों से काव्य–उपवन को भर देने वाली कवयित्री महादेवी वर्मा अर्न्तमुखी भावसाधना की कवयित्री हैं। वेदना, करुणा, भावुकता और पीड़ा का सान्निध्य पाकर कवयित्री ने हिन्दी कविता को एक नए लोक से परिचित कराया। सुमित्रानन्दन पंत के अनुसार – ''जिस निराकार दृष्टि को निराला ने बुद्धि से ग्रहण करके अपने काव्य–पट में अवतरित किया, उसी को महादेवी ने भावना द्रवित हृदय की झंकार द्वारा कला वैभव मण्डित तथा प्रतीक बिम्बित किया।'' लेकिन करुणा और वेदना की इस कवयित्री की कविता अन्य कारुणिक कवियों से भिन्न काव्यालोक का निर्माण करती हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में कहें तो – ''इस वेदना को लेकर उन्होंने हृदय की ऐसी अनुभूतियाँ सामने रखी हैं, जो लोकोत्तर हैं। कहाँ तक ये वास्तविक अनुभूतियाँ हैं और कहाँ तक अनुभूतियों की रमणीय कल्पना, यह नहीं कहा जा सकता।''

दरअसल कविता का अनुभूत सत्य आनन्द की प्राप्ति है और काव्य–मर्मज्ञों के अनुसार यदि यह आनन्द भी लोकोत्तर हो तो यह काव्यानुभूति की अपूर्वता होती है। लेकिन इस लोकोत्तर अनुभूतियों को केवल असीम और अलौकिक के साथ तादात्म्य सम्बन्धों मात्र की आधारभूमि तक ले जाकर प्राप्त कर पाना सम्भव नहीं है वरन्

इसके लिए तो दृश्य–अदृश्य सृष्टि के साथ पराकाष्ठित सम्बन्ध स्थापित कर ही प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिए महादेवी वर्मा कबीर, जायसी और अन्य रहस्यवादी कवियों की सामाजिक वेदना की अभिव्यक्ति से परे अनुभूतियों को लोकोत्तर तक ले जाती हैं।

महादेवी वर्मा का काव्य अपने लोक और लोकोत्तर की अभिव्यक्ति एक साथ करता दिखाई देता है। इसका विशेष कारण है कि महादेवी की कविता का मध्यवर्गीय चेतना को अपने भीतर समेट कर उसे लोक से लोकोत्तर बना देना। इस तरह महादेवी वर्मा ने अपनी कविताओं में लोकधर्म का निर्वाह करते हुए उसे अपने वाणी द्वारा लोकोत्तर बना दिया। दरअसल इस तरह लोक और लोकोत्तर की सम्बद्धता की संयुक्त भूमिकाओं का निर्वहन महादेवी वर्मा के अतिरिक्त आधुनिक कवियों में सिर्फ निराला में है। डॉ. रामरतन भटनागर के अनुसार – ''निराला में भूमा की साधना है, महादेवी अणिमा की साधिका है। एक ने अपने अहम् को इतना विस्तार दिया कि प्रकृति, मनुष्य और चराचर जगत को समेट कर विराट् का प्रतीक बन गया है तो दूसरे ने अपनी आत्मा के अंतरंगी कक्ष में प्रवेश कर वहाँ मिलन और विरह की साधना के द्वारा अत्यन्त गहराई में उस एकता को पाया है जो सचराचर जगत को एक सूत्र में जोड़ती है। इसीलिए महादेवी में विस्तार की कमी है परन्तु भीतर की अपरिसीम गहराई व्यापकता और विविधता की पूर्ति करती है।''

इस तरह देखा जाए तो महादेवी का काव्य किसी बाह्य साधना का प्रतिफल नहीं बल्कि आंतरिक साधना का परिणाम है। इसीलिए उनकी साधना मध्यकालीन कवियों की तरह अध्यात्म की वृत्ति में दिखाई नहीं देती और न ही वह रहस्य की अनुभूति की सूक्ष्मतर चेतना पर ही निर्भर है बल्कि वह तो जीवन के माधुर्य का अपरिमित रूप है। वह जहाँ उस अव्यक्त के मिल न पाने की पीड़ा में भी जीवन की सार्थकता प्राप्त कर लेती हैं वहीं मिलन के उल्लास में भी वह लोकभूमि से विमुख नहीं होतीं।

महादेवी वर्मा की कविताओं के लोकोत्तर रूप की एक विशेष बात यह भी है कि वह ऐसी वेदना से अनुप्राणित है जो माधुर्ययुक्त है। महादेवी कहती हैं, 'जीवन में मुझे बहुत दुलार, बहुत आदर और बहुत मात्रा में सब कुछ मिला है, उस पर पार्थिव दुःख की छाया नहीं पड़ी। कदाचित् यह उसी की प्रतिक्रिया है कि वेदना मुझे इतनी मधुर लगने लगी है।'' उनकी दृष्टि में सुख से जीवन में अनन्त माधुर्य नहीं आता बल्कि दुःख जीवन में माधुर्य को विस्तार देता हैं। बौद्ध धर्म के दुःखवाद का प्रभाव बचपन से ही महादेवी वर्मा पर पड़ा इसीलिए दुःख उनके जीवन का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। वे कहती हैं कि 'दुःख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है जो सारे संसार को एक सूत्र में बाँध रखने की क्षमता रखता है। हमारे असंख्य सुख हमें चाहे मनुष्यता की सीढ़ी तक भी न पहुँचा सकें किन्तु हमारा एक बूँद आँसू भी जीवन को अधिक मधुर, अधिक उर्वर बनाए बिना नहीं गिर सकता।''

रजतकरों की मृदुल, तूलिका,
से ले तुहिन बिन्दु सुकुमार,
कलियों पर जब आँक रहा था।
करुणा कथा अपनी संसार।
तरल हदय की उच्छवासें जब
भोले मेघ लुटा जाते,
अन्धकार दिन की चोटों पर
अंजन बरसाने आते।

x x x x x x

दुःख के पद छू बहते झर–झर
कण–कण से आँसू के निर्झर
हो उठता जीवन मृदु उर्वर।

वास्तव में महादेवी वर्मा की वेदनानुभूति लौकिक प्रेम की विफलता पर आधृत नहीं है। वह तो उनकी कल्पना, सामाजिक जीवन की संवेदना और बौद्ध दर्शन के प्रभाव से प्रसूत है। जय किशन प्रसाद तो महादेवी की इस वेदनानुभूति को उनके हृदय का सौन्दर्य स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार – *'एक बड़ा दार्शनिक सदा रोता रहता है तो इसका मतलब यह नहीं कि वह भौतिक दुःखों से पीड़ित है। वह तो संसार के दुःखों से दुःखी है। महादेवी जी की वेदनानुभूति उनके हृदय का सौन्दर्य है, आध्यात्मिक कलाजन्य अभिव्यक्ति है।''*

आश्चर्य है कि महादेवी वर्मा के सम्पूर्ण काव्य में वेदना की यह अनुभूति सर्वत्र बिखरी हुई दिखाई देती है किन्तु कवयित्री इस वेदना से मुक्त होने की अभिलाषा नहीं रखती। वह तो उस पीड़ा को उस अनन्त में ही ढूँढ लेना चाहती है। यह प्रेम की पराकाष्ठा नहीं तो ओर क्या है! जहाँ प्रिय और पीड़ा दोनों ही एक–दूसरे में समाहित हो चुके हैं –

विकसते मुरझाने को फूल
उदय होता छिपने को चंद
शून्य होने को भरते मेघ
दीप जलता होने को मंद
यहां किसका अनन्त यौवन?
अरे अस्थिर छोटे जीवन!
पर शेष नहीं होती यह
मेरे प्राणों की व्रीड़ा
तुमको पीड़ा में ढूँढा
तुममें ढूँढूँगी पीड़ा।

दरअसल महादेवी वर्मा के पास जिस तरह की सौन्दर्य बोधात्मक शक्ति है वह उन्हें अन्य कवियों से विलग कर देती है। वे कविता के रचना वैचित्र्य पर अपनी दृष्टि केन्द्रित नहीं करती वरन् अपनी आन्तरिक चेतना दृष्टि से बाह्य जगत को देखती हैं। इस तरह उनका बाह्य जगत उनके आन्तरिक सौन्दर्यबोध से अनुप्राणित होकर ही लोक से परे हो जाता है। जार्ज सन्तायना ने एक स्थान पर कहा था – **'Nothing can so pierce the soul as the uttermost sigh of the body'** अर्थात् आह तो मुख से निकलेगा ही। किन्तु यदि वह उच्छवास अनुभूतिपरक है तो वह हमारी आत्मा को स्पर्श कर सकता है अन्यथा नहीं।' महादेवी वर्मा की कविताओं का अनुभूतिपरक उच्छ्वास वेदनायुक्त होने के बावजूद भी रुदन में भी सौन्दर्य और मधुर राग को अनुभूत करता है–

चुभते ही तेरा अरुण बान।
बहते कन–कन से पूफट–पूफट,
मधु के निर्झर से सजल गान।
इन कनक रश्मियों में आया है,
लेता हिलोर तम सिंधु जाग,
बुद्बुद् से बह चलते अपार,
उसमें विहगों के मधुर राग।

महादेवी वर्मा उस अलौकिक परमब्रह्म को रहस्य का केन्द्र नहीं मानती। उनकी दृष्टि में सौन्दर्य की अनुभूति ही रहस्यानुभूति है। बाह्य जगत और आंतरिक जगत के व्यापार की समन्वयात्मकता पर महादेवी वर्मा बल देती हैं। वे स्थूल और सूक्ष्म जगत व्यापारों के समन्वय द्वारा ही सृष्टि के सौन्दर्यबोध को अनुभूति के स्तर पर लोकोत्तर देखती हैं। इसीलिए वे स्वयं को समर्पित कर देना चाहती हैं–

सिन्धु को क्या परिचय दें
देव, बिगड़ते वीचि–विलास?
क्षुद्र हैं मेरे बुद्–बुद् प्राण
तुम्हीं में सृष्टि तुम्हीं में नाश।

लेकिन उनका यह समर्पण केवल अज्ञात के प्रति समर्पण मात्र नहीं है, उस असीम में एक हो जाने की इच्छा भर नहीं है ... उनका यह समर्पण अपने आप को मिटा देने पर भी उत्साह का एहसास करने का समर्पण है। उनके लिए तो इस जीवन से कहीं अधिक आनन्द उस अज्ञात के लिए मिट जाने में है–

वीणा होगी मूक बजाने वाला होगा अन्तर्धान,

विस्मृत के चरणों पर लोटेंगे सौ–सौ निर्वाण।

जब असीम से हो जायेगा लघु सीमा का मेल,

देखोगे तुम देव अमरता खेलेगी मिटने का खेल!

मरने का यह उत्साह महादेवी वर्मा की अनेकानेक कविताओं में मिलता है जो अद्वितीय है। वेदना और रहस्यानुभूति के अन्य कवियों में ऐसा प्रसंग मिलना दुर्लभ है।

इसीलिए महादेवी वर्मा की कविता कबीर और जायसी की रहस्यानुभूति से भिन्न लोकोत्तर अनुभूतियों की कविता है। कबीर की कविता में जहाँ साधनामूल रहस्यवृत्ति के दर्शन होते हैं वहीं जायसी की कविता आत्मानुभूति के स्तर पर जाकर स्थित हो जाती है। किन्तु महादेवी वर्मा इन सबसे परे उस अज्ञात सृष्टि को संचालित करने वाली परमसत्ता के प्रति विस्मय की भावना रखते हुए कहती हैं–

कौन तुम मेरे हृदय में?

कौन मेरी कसक में नित मधुरता भरता अलक्षित?

कौन प्यासे लोचनों में घुमड़ फिर झरता अपरिचित

अनुसरण निःश्वास मेरे कर रहे किसका निरन्तर

चूमने पद–चिह्न किसके लौटते ये श्वास फिर–फिर।

उनकी कविताओं में मध्यकालीन कवियों की–सी एकनिष्ठता नहीं है। कभी–कभी वे 'तुम मुझ में प्रिय फिर परिचय क्या है?' कहकर जीव और ब्रह्म के मध्य अद्वैत भाव की स्थिति उपस्थित करती हैं और कहीं वे उसे द्वैत भाव के रूप में देखते हुए कहती हैं–

तुम सो जाओ, मैं गाऊँ।

मुझको सोते युग बीते

तुमको यों लोरी गाते

अब आओ मैं पलकों में

सपनों की सेज बिछाऊँ।

कहीं–कहीं कवयित्री कबीर की शैली में अन्तर्मुखी साधना को भी अपने गीतों में आख्यायित करती हैं। उनका वह असीम प्रियतम उनके घर–घर में ही समाया है और वे अपने शरीर के स्वाभाविक क्रिया–व्यापारों द्वारा उसकी पूजा का विधान करते हुए माधुर्यभावपरक रहस्यानुभूति को प्रकट करती हैं–

क्या पूजा, क्या अर्चन रे?

उस असीम का सुन्दर मंदिर मेरा लघुतम जीवन रे!

मेरी श्वासें करती रहतीं नित प्रिय का अभिनन्दन रे!

पदरज को धोने उमड़े आते लोचन में जलकण रे!

अक्षत फलकित रोम, मधुर मेरी पीड़ा का चन्दन रे!

स्नेह भरा जलता है झिलमिल मेरा यह दीपक मन रे!

मेरे दृग के तारक में नव उत्पल का उन्मीलन रे!

धूप बने उड़ते जाते हैं प्रतिपल मेरे स्पन्दन रे!

प्रिय प्रिय जपते अधर, ताल देता पलकों का नर्तन रे!

इस प्रकार महादेवी वर्मा की काव्यानुभूति रहस्यानुभूति के स्तर पर अनेक रूपों में अभिव्यक्त हुई है।

महादेवी की कविताओं में अक्सर किसी अज्ञात के प्रति भावानुभूतियों को स्वरांजलि मिली है। महादेवी की कविताओं में इसी अज्ञात के प्रति जो प्रेमानुभूति अभिव्यक्त हुई है उन्हें उनकी रहस्यवादी कविताओं में परिगणित किया जाता है। परतन्त्र समाज में नारी के मन में किसी असीम के प्रति ऐसा भाव सामाजिक दृष्टि से हेय माना जाता रहा है। इसलिए महादेवी की स्थिति भी कुछ वैसी ही थी किन्तु उन्होंने सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर अपने आपको उस असीम के प्रति मीराबाई की तरह समर्पित कर दिया। इसीलिए उन्हें आधुनिक मीराबाई के नाम से भी जाना जाता है।

इस प्रकार देखा जाए तो महादेवी की काव्यानुभूति स्थूल और जड़ उपादानों से परे आन्तरिक अनुभूतियों पर निर्भर है। उनकी कविता लोक की वास्तविक अनुभूतियों को तो अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं किन्तु उनका यह लोकानुभूत सत्य उनके सौन्दर्यबोध से लोकोत्तर अनुभूत सत्य में परिवर्तित हो जाता है। उनकी कविता करुणा या वेदना का प्रलाप नहीं है बल्कि वह साधना की आग में तपी हुई शुचिपरक वाणी है। प्रकृति का प्रत्येक कण उन्हें आनन्द प्रदान करता है। प्रकृति के प्रत्येक कण में वे उस असीम, अज्ञात को देखती हैं और अपनी सौन्दर्यानुभूति को उस रहस्यानुभूति में परिवर्तित कर आनन्द की संरचना करती हैं। यही आनन्द तो लोकोत्तर आनन्द है और इस आनन्द की प्रणेता हैं – *लोकोत्तर अनुभूतियों की कवयित्री – महादेवी वर्मा।*

Copyright © 2018, Dr. Harish Arora. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.